अथ माध्यन्दिनीयः

कर्मकाण्ड-मन्त्रसङ्ग्रहः

[प्रथमो भागः, सामान्याध्यायः]

रचयिता—पं० श्रीगोपालचन्द्रमिश्रः, काशी ।

पं० [illegible]
जहांगीराबाद २०२३९४
बुलन्दशहर (उ०प्र०)
SCANNED

समर्पणम्

त्यक्तपरिग्रहाणामपि कृतशास्त्रग्रहाणाम्, सर्वतन्त्रस्वतन्त्राणामपि तन्त्रपरतन्त्राणाम्, समङ्गीकृतकापायाणामपि समुपासितपीताम्बराणाम्, परिहृतद्वेषाणामपि अज्ञानध्वान्त-विद्वेषिणाम्, पर्यस्तपरिजनानामपि परिवृतजनानाम्, विद्या-विद्वत्-तदनुरागि-जनकल्याणाशंसिनां, नैरु-दुरूह-ग्रन्थिल-ग्रन्था-गूहन-क्षम-लेख-ललितानाम्, तर्ककर्कशधिषणाधावनभीषणानाम्, वैदिकमार्गप्रतिष्ठापनश्रद्धालूनाम्, दतियावनखण्डी-पीताम्बरापीठविहारिणाम्, अप्रकाशितात्थानना-मानां, श्रद्धेयानां स्वामिपादानाम् अभ्युदयावह-सरसा-मोघ-पक्ष्मोत्क्षेपसम्पादनायायं माध्यन्दिनीयः कर्मकाण्डमन्त्रसंग्रहः करसरसीरुहेषु सश्रद्धमर्प्यते,

विनीतेन—

श्रीगोपालचन्द्रमिश्रेण

माध्यन्दिनीयः

कर्मकाण्डमन्त्रसङ्ग्रहः

[प्रथमो भागः, सामान्याध्यायः]

समुचयोगि-भूमिका-विनियोग-मन्त्र-सूच्यादिसहितः

प्रकाशकः—महनीयचरितः पं० श्रीरामनारायणवैद्यः झाँसी

ग्रन्थकर्ता—याज्ञिकवरेण्यः पं० श्रीगोपालचन्द्रमिश्रः

वेद-धर्मशास्त्र-मीमांसाचार्यः, एम० ए, प्राध्यापकः

काशी हिन्दू विश्वविद्यालयस्य

पं० प्रेम दत्त शास्त्री
जहांगीराबाद २-२३६४
बुलन्दशहर (उ०प्र०)

विषयानुक्रमः

प्रकरणम्	मन्त्रसंख्या	पृष्ठसंख्या
१—समर्पणम् (मुखपृष्ठे)		
२—विषयानुक्रमः		२
३—दो शब्द (म० म० पं गिरिधरशर्मा चतुर्वेदी जी)		३
४—भूमिका (पं० श्री गोपालचन्द्र मिश्र जी)		४-८
५—विनियोगसूची (मन्त्र-संहितास्थल-पृष्ठ-निर्देशसहिता)		९-१६
१—स्वस्तिवाचनम्	१-१३ [१३]	१-६
२—देवपूजा	१४-५५ [४२]	७-२६
३—पुरुषसूक्तपूजानुवाकः	५६-७१ [१६]	२७-३२
(क) भोजनाध्यायः	५६-७७ [२२]	२७-३५
(ख) उत्तरनारायणमन्त्राः	७२-७७ [६]	३३-३५
४—रुद्रपूजानुवाकः	७८-९३ [१६]	३५-४१
५—नवग्रहमन्त्राः	९४-१०२ [९]	४१-४५
६—तिलक-वरण-रक्षाबन्धन-आशीर्वाद-मन्त्राः	१०३-१०८ [६]	४५-४८
७—श्रीसूक्तम् (देवीपूजामन्त्राः)	१०९-१२३ [१६]	४८-५१
८—पुस्तकपरिचयः		५१-५२

म० सं० ॥३॥

प्र० भा०

दो शब्द

वर्तमान में स्मार्त कर्मकाण्ड के यथार्थ जानने वाले बहुत ही अल्प हो गये हैं। जो श्रद्धालु आस्तिक जन अपने यहाँ विधिपूर्वक परम्परानुसारी सस्वर वेदमन्त्रों के उच्चारण के साथ कर्मकाण्ड कराना चाहते हैं उन्हें उपनयन विवाह आदि संस्कार एवं श्राद्ध प्रतिष्ठा आदि विशेष कर्म कराने वाले भी बड़ी कठिनता से प्राप्त होते हैं। इससे भी वास्तविक कर्मकाण्ड का लोप-सा होता जारहा है। इस दुर्दशा को मिटाने के लिए श्रीवैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के प्रतिष्ठापक और अध्यक्ष पं० श्रीरामनारायणजी वैद्य के हृदय में प्रेरणा हुई और कुछ विचार विमर्श हुआ, जिस के फल-स्वरूप काशी, एवं मथुरा में अध्ययन-अध्यापन व्यवस्था के साथ तदुपयोगी पुस्तक प्रकाशन की धारणा हुई।

प्रारम्भिक दशा में जिन स्वस्तिवाचन देवपूजा आदि मन्त्रों का सर्वसाधारण के लिए विशेष उपयोग होता है अभी उनका यह सुन्दर संग्रह, विद्वान् उत्साही कर्मकाण्डी आचार्य पं० श्रीगोपालचन्द्र मिश्र प्राध्यापक काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से करवा कर मुद्रित किया जा रहा है।

आशा है इससे तथा भविष्य में प्रकाशित होने वाली पुस्तकों से वेद-कर्मकाण्ड-श्रद्धालु आस्तिक जनों को, विशेषतः पढने वाले, एवं कराने वाले सज्जनों को सस्वर वेदमन्त्र का अभ्यास करने में बहुत लाभ होगा, और इस योजना से कर्मकाण्ड की प्रवृत्ति सुरक्षित रहेगी, साथ ही उक्त पं० रामनारायणजी वैद्य इस सुयश के भागी, तथा श्रद्धालु आस्तिक जनता की कृतज्ञता एवं हार्दिक धन्यवाद के भाजन होंगे।

वाराणसी
नागपञ्चमी २०१९

गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी
[महामहोपाध्याय]

पं० प्रेम दत्त शास्त्री
जहांगीराबाद २०२३९४
बुलन्दशहर (उ०प्र०)

॥३॥

भूमिका

[कर्मकाण्ड और यह संग्रह]

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। समाज का जीवन क्रियाशीलता है। क्रिया या कर्म का मुख्य ध्येय आत्मसन्तोष होना है। आत्मा का वास्तविक बोध तत्वज्ञान से होता है। तत्वज्ञान की पूर्णता सत् चित् आनन्द की सर्वत्र व्यापकता का सार्वकालिक अनुभव है। तत्वज्ञानी होने पर मनुष्य सामाजिक रहते हुए भी लोकमुक्त है—इस अनुक्रम के परिशीलन में ही समाज के जीवन रूप से कर्मकाण्ड की महत्ता ज्ञात होती है।

इसमें सन्देह नहीं, कि भारतवर्ष में ऐसे अनेक तत्वज्ञानी हो चुके हैं जो आत्मा का अनुभव सर्वव्यापक रूप से करते थे। इसीलिए भारतीय संस्कृति में तत्वज्ञ महर्षियों के कर्मकाण्ड के विस्तृत विवेचन, महत्व तथा निर्देश उपलब्ध हैं। आत्मा का प्रकाश सर्वत्र रहते हुए भी शरीर की विशेषता से उसके (=आत्मा के) अनुभव के साधन विभिन्न प्रकार के हो जाते हैं—यही अधिकार का विचार है।

इस कर्मकाण्ड एवं अधिकार संबन्धी तत्वज्ञ महर्षियों की समझ का लोकोपकार के लिए स्मृतियों में विशेष रूप से वर्णन किया है।

खान से निकाला हुआ सोना या मणि अपनी सत्ता एवं मूल्य सुस्थिर रखता हुआ भी व्यावहारिक चमक या गौरव के लिए अनुरूप कर्मकाण्ड (=संस्कार या शोधन) की अपेक्षा

रखता है। इसी प्रकार प्रत्येक प्राणी अपने वास्तविक गौरव को व्यावहारिक जगत् में विकसित करने के लिए कर्मकाण्ड का आसरा लेता है। चाहे वह आधुनिक पाश्चात्य शिक्षा-आचार प्रभावित तर्कप्रिय मस्तिष्क की प्रत्यक्ष अनुमान की सीमा में हो, या श्रद्धाप्रधान आस्तिक तत्वजिज्ञासु की शास्त्र वचन की सीमा में हो, किसी न किसी रूप में कर्म की महत्ता सबको देनी ही पड़ती है। फलतः किसी भी मानव का या उसके मानसिक स्तर का मूल्याङ्कन कराने वाला समाजहित के उद्देश्य से या अपने हित को द्वार रखकर होने वाला शोधनात्मक या संस्कारात्मक कार्य [जैसे दूसरे के लिए सत्कार या त्याग (=देवपूजा), संयम या सेवा (=संगतिकरण) एवं दान के प्रकार की क्रिया] करना ही 'कर्मकाण्ड' है जो 'सहज यज्ञ' है। जिसका आश्रय सभी को कभी न कभी किसी न किसी तरह लेना ही पड़ता है।

बस—इसी रहस्य को मनुष्य जीवन के साथ दूध पानी की तरह एक रूपता देने के लिए तत्वज्ञ लोकहितैषी व्यक्तियों ने कर्मकाण्ड का विकास किया, समादर किया। इसलिए जिस देश में जितनी गहराई से विचार हुआ वहां उतना ही कर्मकाण्ड का व्यापक और ठोस रूप हुआ और उसे धर्म या संस्कृति के साथ जोड़ दिया गया। इसलिए कर्मकाण्ड एक यजमान अर्थात्—व्यक्ति मात्र के हित के लिए नहीं अपितु साक्षात् या परंपरया लोकहित के लिए है। हां—अपना हित, प्रवृत्ति का द्वार अवश्य है। साधारण बुद्धि मनुष्य--ऊंचे विचारों की महत्ता तब देता है जब उसकी मूल प्रवृत्तियाँ=जो जन्ममरण शीलतारूप मृत्युलोक की योनियों की साहजिक भोग क्षमता के रूप में विद्यमान है=की पूर्त्ति कर लेता है। अतः कर्मकाण्ड के मूल रहस्य (=आत्मानुभव) में अड़चन देनेवाले कुसंस्कारों (मल) को हटाकर मनःशुद्धिको बल देने की बात को छिपाकर (तुलना कीजिए या० स्मृ० १।८) साधारण स्तर के व्यक्तियों-जिनकी

संख्या सर्वदा अत्यधिक रहती है--को प्रवृत्त करने के लिए कामना का प्रलोभन देकर कर्मकाण्ड किया कराया जाता है।

नित्य नैमित्तिक कर्मकाण्ड की भांति काम्य कर्मकाण्ड भी अधिकार सामर्थ्य रहते हुए फल प्राप्ति की प्रबल लालसा से नहीं किन्तु व्यावहारिक उपादेयतार्थ खाना पूरी के रूप में अर्थात् निष्काम भाव से किया जाता है तो उसकी लोककल्याणकारिता या लोकसंग्रह के कारण महत्ता अधिक है। पर यदि ऐसा निष्काम कर्म करना किसी से संभव नहीं हो तो भी शास्त्रानुसार कर्त्ता व्यक्ति को तो कर्मकाण्ड का फल मिलेगा ही साथ ही में इस धर्मानुष्ठान से लोकस्थिरता भी बनी रहती है। इसलिए किसी भी व्यक्ति को कभी भी कर्मकाण्ड की उपेक्षा नहीं करनी चाहिये, भले ही उसके फल की उपेक्षा हो जाय। जैसा कि यहां के उद्धृत कुछ वचनों से भी स्पष्ट होता है—

'कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥'—ईशावास्योपनिषद् २;
'धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा।'—तैत्तिरीयश्रुति;
'यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत्।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्।
एतान्यपि तु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा फलानि च।
कर्त्तव्यानीति मे पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम्॥'—१८।५-६।
'यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः।'—गीता ३।९;

कर्मकाण्ड में मूलतः दो विभाग हैं—एक श्रौत, दूसरा स्मार्त। श्रौत कर्मकाण्ड का यथा-विधि अहिताग्नि व्यक्ति ही अधिकारी है। आज, धर्मप्राण भारतवर्ष में आहिताग्नियों का मिलना, होना असंभव सा हो गया है। जनसाधारण में स्मार्त कर्मकाण्ड की ही जानकारी, व्यवहार या आदर है।

कर्मकाण्ड कराने का अधिकार व्यवहारतः और शास्त्रतः ब्राह्मण जाति को है परन्तु जानकारी एवं मन्त्राभ्यास का अधिकार उपनीत त्रैवर्णिक मात्र को है। आज पण्डिताई वृत्ति करने वालों से अतिरिक्त ब्राह्मणों ने तथा क्षत्रिय वैश्यों ने आवश्यक कर्मकाण्ड की जानकारी भी छोड़ दी है।

आज किसी को इतना समय नहीं कि वह पूरी अपनी वेद की शाखा का अध्ययन कर सकें। यदि कुछ मन्त्राभ्यास या जानकारी की इच्छा हुई तो कोई ऐसा उपयोगी व्यवहार में अधिकतया काम आनेवाले कर्मकाण्ड के मन्त्रों का संग्रह उपलब्ध नहीं था जिससे इच्छा की पूर्ति की जा सके। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए उत्तर भारत में सर्वाधिक समादृत माध्यन्दिन शाखा के कर्मकाण्डोपयोगी मन्त्रों का यह संग्रह प्रस्तुत किया गया है।

इस संग्रह को कई भागों में उपयोगिता या कर्मकाण्डीय प्रवृत्ति का मनोवैज्ञानिक शैली से स्तर समझ कर पूरा करने का विचार किया गया है। अभी आपकी सेवा में 'सामान्याध्याय' नाम से प्रथम भाग उपस्थित किया गया है।

इसके विषयानुक्रम तथा विनियोग सूची से इसकी उपयोगिता का स्वभावतः अनुमान हो जायगा और विनियुक्त मन्त्रों का आधार 'स्मार्तपीयूष' [स्वतन्त्र पुस्तक] से ज्ञात हो जायगा।

आशा है भारतीय वेदाधिकारी व्यक्ति इसका समादर करके अपनी और देश की संस्कृति रक्षा में अपेक्षित बल प्राप्त कर सकेंगे।

इस प्रकाशन में प्रेस के कम्पोज की असुविधा के कारण (यथा सङ्ग्रह का संग्रह) द्वित्वादिनिर्देश, भिन्नस्तरीय अक्षर-मात्रा-चिन्हों का योजन, मानव सुलभ असावधानी के कारण स्वर-व्यञ्जन-मात्रा-लेखन-व्यत्यास होना यत्र तत्र यत् किञ्चित् संभव है, उसे पाठकों को सुधार लेना चाहिए।

अन्त्य में मैं इस भाग के समाप्ति में प्रकाशित श्लोकों के भाव की ओर ध्यान आकृष्ट कराता हुआ भारत की गौरव प्राप्त संस्था श्रीवैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के संस्थापक एवं अध्यक्ष पं० रामनारायण वैद्य जी का अधिक आभार मानता हूँ, जिनके उत्साह से यह सेवा मुझ से बन सकी।

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, कर्मकाण्डात् सदा हितात्॥

इति शुभम्।

विद्यानिलयः
३२।१७ ब्रह्मनाल
वाराणसी १.

निवेदक, भवदीय—
श्रीगोपालचन्द्र मिश्र

माध्यन्दिनीये कर्मकाण्डमन्त्रसंग्रहे सामान्याध्यायात्मक-प्रथमभागस्य
मन्त्र-संहितास्थलनिर्देशादिसहिता

विनियोगसूची

कर्मनाम	संग्रहस्य मंत्रसंख्या	मन्त्रः			संग्रहस्य पृष्ठसंख्या
पवित्रधारणम्	१	पवित्रेस्थो	१	१२	१
			४	४	
स्वस्तिवाचनम्	२	आनोभद्राः	२५	१४	२
२-१३ [१२]	३	देवानां भद्रा	२५	१५	२
	४	तान् पूर्वया	२५	१६	३
	५	तन्नो वातो	२५	१७	३
	६	तमीशानम्	२५	१८	३
	७	स्वस्ति नः	२५	१९	४
	८	पूषदश्वा	२५	२०	४
	९	भद्रं कर्णेभिः	२५	२१	५
	१०	शतमिन्नु शरदः	२५	२२	५
	११	अदितिर्द्यौः	२५	२३	५
	१२	द्यौः शान्तिः	३६	१७	६
	१३	यतोयतः	३६	२२	६

जगन्नाथराव २०२-४

कर्मनाम	संग्रहस्थ—मंत्रसंख्या	मन्त्रः	संहितायाः अ०	म०	संग्रहस्थ पृष्ठसंख्या
गणपतिपूजनम्	१४	गणानान्त्वा	२३	१९	७
गौरीपूजनम्	१५	अम्बेऽअम्बिके	२३	१८	७
विष्णुपूजनम्	१६	इदं विष्णुः	५	१५	८
शिवपूजनम्	१७	नमः शम्भवाय	१६	४१	८
प्रतिष्ठा	१८	मनो जूतिः	२	१३	८
आसनम्	१९	अदित्यै व्युन्दनम्	२	२	९
पाद्यम्	२०	त्रीणि पदा	३४	४३	९
अर्घ्यम्	२१	धामन्ते	१७	९९	१०
आचमनीयम्	२२	इमम्मे वरुण	२१	१	१०
स्नानम्	२३	द्रुपदादिव	२०	२०	१०
पयःस्नानम्	२४	पयः पृथिव्याम्	१८	३६	११
दधिस्नानम्	२५	दधिक्राव्णः	२३	३२	११
घृतस्नानम्	२६	घृतम्मिमिक्षे	१७	८८	१२
मधुस्नानम् [३]	२७	मधुव्वाताः	१३	२७	१२
	२८	मधु नक्तम्	१३	२८	१३
	२९	मधुमान्नः	१३	२९	१३
शर्करास्नानम्	३०	अपाँश्ररसम्	९	३	१३

कर्मनाम	संग्रहस्थ—मंत्रसंख्या	मन्त्रः	संहितायाः अ०	म०	संग्रहस्थ पृष्ठसंख्या
पञ्चामृतस्नानम्	३१	पञ्च नद्यः	३४	११	११
शुद्धोदकस्नानम्	३२	शुद्धवालः सर्व	२४	३	१४
वस्त्रम्	३३	सुजातो ज्योतिषा	११	४०	१५
यज्ञोपवीतम्	३४	यज्ञो देवानाम्	८	४	१५
गन्धः	३५	त्वाङ्गन्धर्वाः	१२	९८	१६
अक्षताः	३६	अक्षन्नमीमदन्त	३	५१	१६
पुष्पम्	३७	ओषधीः प्रति	१२	७७	१७
दूर्वाः	३८	काण्डात् काण्डात्	१३	२०	१७
बिल्वपत्रम्	३९	नमो बिल्मिने	१६	३५	१७
तुलसीदलम्	४०	शिवो भव	११	४५	१८
परिमलद्रव्याणि	४१	अहिरिव भोगैः	२९	५१	१८
सिन्दूरम्	४२	सिन्धोरिव	१७	९५	१९
धूपः	४३	धूरसि धूर्व	१	८	१९
दीपः	४४	अग्निर्ज्योतिः	३	६	२०
नैवेद्यम्	४५	अन्नपतेऽन्नस्य	११	८३	२१
करोद्वर्तनम्	४६	अ६.शुनाते	२०	२७	२१
ताम्बूलम्	४७	याः फलिनीर्या	१२	८९	२१

मंनाम	संग्रहस्थ—मंत्रसंख्या	मन्त्रः	संहितायाः अ०	म०	संग्रहस्थ पृष्ठसंख्या
दक्षिणा	४८	हिरण्यगर्भःसम्	२५	१०	२२
आरार्तिक्यम्	४९	इद६.हविः	१६	४८	२२
	५०	आरात्रिपार्थिव६.	३४	३२	२३
प्रदक्षिणा	५१	ये तीर्थानि	१६	६१	२३
पुष्पाञ्जलिः	५२	यज्ञेनयज्ञम्	३१	१६	२४
	५३	राजाधिराजाय			२४
	५४	स्वस्तिसाम्राज्यम्			२४
	५५	विश्वतश्चक्षुः	१७	१९	२६
* आवाहनम्, ध्यानं वा	५६	सहस्रशीर्षा	३१	१	२७
आसनम्	५७	पुरुषऽएवेदम्	३१	२	२७
पाद्यम्	५८	एतावानस्य	३१	३	२७
अर्घ्यम्	५९	त्रिपादूर्ध्वः	३१	४	२८
आचमनीयम्	६०	ततो विराड	३१	५	२८
स्नानम्	६१	तस्माद्यज्ञात्सर्व	३१	६	२९
वस्त्रम्	६२	तस्माद्यज्ञात्०ऋचः	३१	७	२९

* पौरुषाध्यायस्य ५६-७७ [२२] ब्रह्मार्पणे (भोजने) विनियोगः । पौरुषानुवाकस्य (= पुरुषसूक्तस्य) ५६-७१ [१६] विष्णुपूजने सर्वदेवपूजने विष्णुयज्ञस्वाहाकारे च विनियोगः ।

कर्मनाम	मन्त्र संख्या	मन्त्रः	अ०	म०	पृष्ठसंख्या
यज्ञोपवीतम्	६३	तस्मादश्वा	३१	८	२९
गन्धः	६४	तं यज्ञम्	३१	९	३०
पुष्पम्	६५	यत्पुरुषम्	३१	१०	३०
धूपः	६६	ब्राह्मणोऽस्य	३१	११	३०
दीपः	६७	चन्द्रमा मनसो	३१	१२	३१
नैवेद्यम्	६८	नाभ्याऽआसीत्	३१	१३	३१
ताम्बूलम्	६९	यत्पुरुषेण	३१	१४	३२
प्रदक्षिणा	७०	सप्तास्यासन्	३१	१५	३२
पुष्पाञ्जलिः	७१	यज्ञेन यज्ञम्	३१	१६	३२
	७२	अद्भ्यः सम्भृतः	३१	१७	३३
	७३	वेदाहमेतं	३१	१८	३३
	७४	प्रजापतिश्चरति	३१	१९	३४
	७५	यो देवेभ्यः	३१	२०	३४
	७६	रुचम्ब्राह्मम्	३१	२१	३४
	७७	श्रीश्च ते	३१	२२	३५
†आवाहनम्, ध्यानं वा	७८	नमस्ते रुद्र	१६	१	३५
आसनम्	७९	या ते रुद्र	१६	२	३६

† रुद्रानुवाकस्य ७८-९३ [१६] शिवपूजायां, रुद्रयज्ञस्वाहाकारे च विनियोगः।

कर्मनाम	संग्रहस्थ—मंत्रसंख्या	मन्त्रः	संहितायाः अ०	म०	संग्रहस्थ पृष्ठसंख्या
पाद्यम्	८०	यामिषुम्	१६	३	३६
अर्घ्यम्	८१	शिवेनवचसा	१६	४	३६
आचमनीयम्	८२	अद्धयवोचदधि	१६	५	३७
स्नानम्	८३	असौयस्ताम्रो	१६	६	३७
वस्त्रम्	८४	असौयोवसर्पति	१६	७	३७
यज्ञोपवीतम्	८५	नमोस्तु नील	१६	८	३८
गन्धः	८६	प्र मुञ्च	१६	९	३८
पुष्पम्	८७	विज्यन्धनुः	१६	१०	३८
धूपः	८८	या ते हेतिः	१६	११	३९
दीपः	८९	परि ते धन्वनो	१६	१२	३९
नैवेद्यम्	९०	अवतत्य धनुः	१६	१३	३९
ताम्बूलम्	९१	नमस्तऽआयु	१६	१४	४०
प्रदक्षिणा	९२	मा नो महान्त	१६	१५	४०
पुष्पाञ्जलिः	९३	मा नस्तोके	१६	१६	४०
सूर्यपूजनम्	९४	आ कृष्णेन	३३	४३	४१
चन्द्रमःपूजनम्	९५	इमं देवा	१०	१८	४२
मङ्गलपूजनम्	९६	अग्निर्मूर्द्धा	३	१२	४२

कर्मनाम	संग्रहस्थ—मंत्रसंख्या।	मन्त्रः	संहितायाः अ०	म०	संग्रहस्थ पृष्ठसंख्या
बुधपूजनम्	९७	उद्बुध्यस्व	१५	५४	४३
बृहस्पतिपूजनम्	९८	बृहस्पते परि	२६	३	४३
शुक्रपूजनम्	९९	अन्नात्परि	१९	७५	४४
शनिपूजनम्	१००	शन्नो देवी	३६	१२	४४
राहुपूजनम्	१०१	कया नः	३६	४	४५
केतुपूजनम्	१०२	केतुङ्कृण्वम्	२९	३७	४५
तिलकम्	१०३	युञ्जन्ति ब्रध्न	२३	५	४५
,,	१०४	युञ्जन्त्यस्य	२३	६	४६
वरणम्	१०५	व्रतेन दीक्षा	१९	३०	४६
रक्षाबन्धनम्	१०६	यदाबध्नन्दाक्षा	३४	५२	४६
आशीर्वादः	१०७	दीर्घायुस्त	१२	१००	४७
,,	१०८	पुनस्त्वा	१२	४४	४७
* श्रीसूक्तम् [१६]	१०९—१२४	हिरण्यवर्णां	ऋग्वेदपञ्चममण्डलान्ते परिशिष्टम्		
आवाहनम् ध्यानं वा	१०९	हिरण्यवर्णां हरिणीं			४८
आसनम्	११०	तां म आ वह			४९
पाद्यम्	१११	अश्वपूर्वांरथमध्यां			४९

कर्मनाम	संग्रहस्थ—मंत्रसंख्या	मन्त्रः	संग्रहस्थ पृष्ठसंख्या
अर्घ्यम्	११२	कां सोस्मितां	४
आचमनीयम्	११३	चन्द्रां प्रभासां	४६
स्नानम्	११४	आदित्यवर्णे	४९
वस्त्रम्	११५	उपैतु मां	४६
अलङ्करणम्	११६	क्षुत्पिपासामलां	५०
गन्धः	११७	गन्धद्वारां	५०
पुष्पम्	११८	मनसःकाम	५०
धूपः	११९	कर्दमेन प्रजा	५०
दीपः	१२०	आपः स्रजन्तु	५०
नैवेद्यम्	१२१	आर्द्रां पुष्करिणीं	५०
ताम्बूलं, प्रदक्षिणा च	१२२	आर्द्रां यः करिणीं	५१
पुष्पाञ्जलिः	१२३	तां म आवह	५१
जपः	१२४	यः शुचिः प्रयतो	५१

सूचीयं विनियोगानां मन्त्र— तत्स्थलदर्शिका।
अदृष्टपूर्वा नूत्नाद्या सन्तोषाय विदां भवेत्॥

—श्रीगोपालचन्द्रमिश्रः।

याज्ञिकाचार्यश्रीगोपालचन्द्रमिश्रसंगृहीतः,

माध्यन्दिनीयकर्मकाण्ड-मन्त्रसंग्रहः ।

❀ प्रथमो भागः ❀

हरिः ॐ । पवित्रे स्थः । पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः ॥ तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुनेतच्छकेयम् ॥ १ ॥

[१] पवित्रधारणमन्त्रः ।

म० सं० ॥२॥

आनः÷ । आनोभद्राःक्रतवोयन्तुविश्वतोद-
ब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदं÷ ॥ देवानोय-
थासदमिद्वृधेऽअसन्नप्रायुवोरक्षितारोदिवे
दिवे।२।देवानांम्भद्रा।देवानांम्भद्रासुमति-
र्ऋजूयतान्देवानांꣳरातिरभिनोनिवर्त्तताम्॥
देवानांꣳसख्यमुपसेदिमावयन्देवानुऽआ-
युःप्रतिरन्तुजीवसे॥३॥ तान्पूर्व्वया। तान्पू- ॥२॥

प्र० भा०

[२-१३] स्वस्तिवाचनमन्त्राः ।

व्वियानिविदाहूमहेव्वयम्भगंम्मित्रमादितिन्द-
क्षंमस्त्रिधंम् ॥ अर्य्यमणंव्वरुणꣳसोमंमश्वि-
नासरस्वतीनꣳसुभगामयस्करत् ॥४॥ तन्नꣳ÷ ।
तन्नोव्वातोमयोभुव्वातुभेषजन्तन्न्मातापृथि-
वीतत्पितद्द्यौः ॥ तद्ग्रावांणꣳसोमसुतोम-
योभुवस्तदश्विनाशृणुतन्धिष्ण्यायुवम् ।५।
तमीशानम् । तमीशानꣳजगंतस्तस्थुषस्प-
तिन्धियञ्जिन्व्वमवसेहूमहेव्वयम् ॥ पूषानो-

यथाव्वेदंसामसंद्दृधेरंक्षितापायुरदंब्धः
स्वस्तयें ॥६॥ स्वस्तिनंः । स्वस्तिनुऽइन्द्रो-
बृद्धश्रवाःस्वस्तिनंः पूषाव्विश्ववेदाः ॥
स्वस्तिनुस्तार्क्ष्योंऽअरिष्टनेमिःस्वस्ति-
नोबृहस्पतिर्दधातु ॥७॥ पृषंदश्वामरुतंः ।
पृषंदश्वामरुतःपृश्निंमातरःशुभंयावानो -
व्विदथेषुजग्गंमयः॥अग्निजिह्वामनवःसूर-
चक्षसोव्विश्वेनोदेवाऽअवसागंमन्निह ॥८॥

भद्रङ्कर्णेभिः । भद्रङ्कर्णेभिःशृणुयामदेवा
भद्रम्पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ॥ स्थिरैरङ्गैस्तु
ष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहिदेवहितंयदायु ॥ ९ ॥ शतमित् । शतमिन्नुशरदोऽअन्ति
देवायत्रानश्चक्राजरसंन्तुनाम ॥ पुत्रासो-
यत्रपितरोभवन्तिमानोमध्यारीरिषतायुर्ग
न्तोः ॥ १० ॥ अदितिर्द्यौः । अदितिर्द्यौरदि
तिरन्तरिक्षमदितिर्म्मातासपितासपुत्रः ॥

विश्वेदेवाऽअदितिः पञ्चजनाऽअदितिर्जा-
तमदितिर्जनित्वम्॥ ११॥ द्यौः शान्तिः। द्यौः
शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवीशान्ति-
रापः शान्तिरोषधयः शान्तिः॥ वनस्पतयः
शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः सर्वꣳ
शान्तिः शान्तिरेवशान्तिः सामा शान्तिरेधि
॥ १२॥ यतोयतः। यतोयतः समीहसेततो
नोऽअभयङ्कुरु॥ शन्नः कुरुप्रजाभ्योभयन्नः

पशुभ्यः ॥ १३ ॥ गणानान्त्वा । गणानान्त्वा
गणपतिꣳहवामहेप्रियाणान्त्वाप्रियपतिꣳ
हवामहेनिधीनान्त्वानिधिपतिꣳहवामहेव-
सोमम ॥ आहमजानिगर्भधमात्त्वमजा-
सिगर्भधम् ॥ १४ ॥ अम्बेऽअम्बिके ।
अम्बेऽअम्बिकेम्बालिकेनमानयतिकश्चन ॥
ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम्

[१४] गणपतिमन्त्रः ।

॥ १५ ॥ इदंविष्णुः । इदंविष्णुर्विचक्र-
मेत्रेधानिदधेपदम् ॥ समूढमस्यपाꣳसुरे-
॥ १६ ॥ नमः शम्भवायः । नमः शम्भवा-
यचमयोभवायचनमः शङ्कायचमयस्क-
रायचनमः शिवायचाशिवतरायच ॥ १७ ॥
मनोजूतिः । मनोजूतिर्जुषतामाज्ज्यस्युबृह
स्पतिर्य्ययज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टंय्ययज्ञꣳ समि-

[१५] गौरीमन्त्रः । [१६] विष्णुमन्त्रः । [१७] शिवमन्त्रः ।

मन्दधातु॥ विश्वेदेवासऽइहमादयन्तुमोꣳ-
म्प्रतिष्ठ ॥ १८ ॥ अदित्यैव्व्युन्दनम् । अ-
दित्यैव्व्युन्दनमसि विष्णोस्तुपोस्यूर्ण्णं-
म्रदसन्त्वास्तृणामिस्वासुस्थान्देवेभ्यो-
भुवंपतयेस्वाहाभुवंनपतयेस्वाहाभूता-
नाम्पतयेस्वाहा॥ १९॥ त्रीणिपदा । त्रीणि-
पदाविचक्रमेविष्णुंग्गोपाऽ अदाभ्यः ।

पं० प्रेम दत्त शास्त्री

[१८] प्रतिष्ठामन्त्रः । [१९] आसनमन्त्रः ।

जहांगीराबाद २०२३९४
बुलन्दशहर (उ०प्र०)

अतोधर्म्माणिधारयन् ॥२०॥ धामन्ते। धा-
मन्तेव्विश्वम्भुवनमाधिश्रितमुन्तः। समु-
द्रेहृद्यन्तरायुषि । अपामनीकेसमिथेयऽ
आभृतस्तमश्यामधुमन्तन्तऽऊर्म्मिम्
॥ २१ ॥ इमम्मे। इमम्मेव्वरुणश्रुधीहवमु-
द्यार्चमृडय । त्वामवस्युराचके ॥ २२ ॥
द्रुपदादिवमुमुचानः । द्रुपदादिवमुमुचानः

[२०] पाद्यमन्त्रः । [२१] अर्घमन्त्रः । [२२] आचमनमन्त्रः ।

स्विन्नः स्नातोमलादिव ॥ पूतम्पवित्रेणे-
वाज्ज्यमापः शुन्धन्तुमैनंसः ॥२३॥ पयः
पृथिव्याम्। पयः पृथिव्याम्पयऽओषधी-
षुपयोदिव्युन्तरिक्षेपयोधाः॥ पयस्वतीः
प्रदिशः सन्तुमह्यम् ॥ २४ ॥ दधिक्रा-
व्णोऽअकारिषम्। दधिक्राव्णोऽअकारिष-
मिजिष्णोरश्वस्यवाजिनः ॥ सुरभिनोमु-

[२३] स्नानमन्त्रः। [२४] दुग्धस्नानमन्त्रः।

खाकरꣳप्रणऽआयूꣳषितारिषत् ॥ २५ ॥ घृतान्मिमिक्षे । घृतान्मिमिक्षेघृतमस्स्यो-
निर्घृतेश्रितोघृतम्वस्स्यधाम ॥ अनुष्वध-
मावहमादयस्वस्वाहाकृतंवृषभवक्षि-
हव्यम् ॥ २६ ॥ मधुव्वाताऽ । मधुव्वाता-
ऽऋतायतेमधुक्षरन्तिसिन्धवः ॥ माद्-
ध्वीर्नःसन्त्वोषधीः ॥ २७ ॥ मधुनक्तम् ।

[२५] दधिस्नानमन्त्रः । [२६] घृतस्नानमन्त्रः । [२७-२९] मधुस्नानमन्त्रः ।

मधुनक्तमुतोषसोमधुमत्पार्थिवꣳरजः ॥
मधुद्द्यौरस्तुनः पिता ॥ २८ ॥ मधु-
मान्नः। मधुमान्न्योषधीर्मधुमाँ२ ॥
ऽअस्तुसूर्य्यः ॥ मादुध्वीर्गावोभव -
न्तुनः ॥ २९ ॥ अपाꣳरसम् । अपाꣳ
रसमुद्वयसꣳसूर्य्येसन्तꣳसमाहितम् । अ-
पाꣳरसस्ययोरसस्तंवोगृह्णाम्युत्तममु -
पयामगृहीतोसीन्द्रायत्वाजुष्टंगृह्णाम्येु -

षतेयोनिरिन्द्रायत्त्वाजुष्टंतमम् ॥ ३० ॥
पञ्चनद्युःसरस्वतीमापियन्तिससस्रोतसः ॥
सरस्वतीतुपञ्चधासोदेशेभवत्सरित् ॥३१॥
शुद्धवालःसर्व्वशुद्धवालः। शुद्धवालःसर्व्व-
शुद्धवालोमणिवालस्त्तऽआऽइश्वनाश्श्येः
तंःश्येतःक्षोरुणस्तेरुद्रायंपशुपतयेकृष्णा-
ग्रीवाऽअंवलिप्तारौद्रानभोरूपाःपार्ज्ज-

[३०] शर्करास्नानमन्त्रः। [३१] पञ्चामृतस्नानमन्त्रः।

न्याः ॥३२॥ सुजातोज्ज्योतिषा । सुजा-
तोज्ज्योतिषासहशर्म्मन्वरूथमासदत्स्वः ।
न्वासोऽअग्नेविशश्वरूपꣳ संन्ययस्व-
विभावसो ॥ ३३ ॥ यज्ञोदेवानाम् ।
यज्ञोदेवानाम्प्रत्येतिसुम्मनमादित्यासो-
भवताम्मृडयन्तः ॥ आवोर्वाचीसुमतिर्व्व-
वृत्त्यादꣳहोश्चिद्यावरिवोवित्तरासदा-

[३२] शुद्धोदकस्नानमन्त्रः । [३३] वस्त्रमन्त्रः ।

पं० प्रेम दत्त शास्त्री
जहांगीराबाद २०२३९४
बुलन्दशहर (उ०प्र०)

दित्येऽभ्यस्त्वा ॥ ३४ ॥ त्वाङ्गन्धुर्व्वाः ।
त्वाङ्गन्धुर्व्वाऽअखनुँस्त्वामिन्द्रस्त्वाम्बृह-
स्पतिः ॥ त्वामोषधेसोमोराजाव्विद्वा-
न्यक्ष्मादमुच्चयत ॥ ३५ ॥ अक्षन्नमी-
मीमदन्त । अक्षन्नमीमदन्तुह्यवप्प्रिया-
ऽअधूषत ॥ अस्तोषतस्वभानवोव्विप्रान-
विष्ठयामतीयोजान्विन्द्रतेहरी ॥ ३६ ॥

[३४] यज्ञोपवीतमन्त्रः । [३५] गन्धमन्त्रः । [३६] अक्षतमन्त्रः ।

ओषधीः प्रति । ओषधीः प्रतिमोदद्ध्वम्पुष्पवतीः प्रसूवरीः ॥ अश्वाऽइवसजित्वरीर्वीरुधः÷पारयिष्णवः÷॥३७॥ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती । काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्तीपरुषः परुषस्परि ॥ एवानोदूर्वेप्रतनुसहस्रेणशतेनच ॥३८॥ नमोबिल्मिनै । नमोबिल्मिनैचकवचिनैचनमोव्वर्म्मिणै

[३७] पुष्प-माला-मन्त्रः । [३८] दूर्वामन्त्रः ।

चव्वरूथिनेचुनमः॑ श्श्रुतायंचश्श्रुतसेनायं
चुनमोदुन्दुब्भ्यायचाहनन्न्यायच॥ ३९ ॥
शिवोभंव । शिवोभंवप्प्रजाब्भ्योमानुषी-
ब्भ्यस्त्वमंङ्गिरः॑ ॥ माद्द्यावांपृथिवीऽअ-
भिशोचीर्म्मान्तरिक्षम्माव्वनुस्पतीन्॥४०॥
अहिंरिवभोगैः॑। अहिंरिवभोगैः॑ पर्य्येतिबा-
हुञ्ज्यायांहेतिम्परिबाधंमानः॑॥हस्त्तघ्नोव्वि-

[३९] बिल्वपत्रमन्त्रः। [४०] तुलसीमन्त्रः।

श्वाव्रयुनानिविद्वान्पुमान्पुमाꣳसम्पारि-
पातुविश्वतः ॥४१॥ सिन्धोरिवप्राद्ध्वने ।
सिन्धोरिवप्राद्ध्वनेशूघनासोव्वातप्रमियः
पतयन्तियुह्वाः ॥ घृतस्यधाराऽअरुषोन
व्वाजीकाष्ठाभिन्दन्नूर्म्मिभिः पिन्न्वं-
मानः ॥४२॥ धूरसि । धूरसिधूर्व्वधूर्व्वन्तु-
न्धूर्व्वतंयोस्मान्धूर्व्वतितन्धूर्व्वयंव्वयन्धू-

[४१] नानापरिमलद्रव्यमन्त्रः । [४२] सिन्दूरमन्त्रः ।

र्व्वामः ॥ देवानांमसि व्वह्नितम्ꣳ सस्नितम्-
म्पप्रिंतमुञ्जुष्टंतमन्देवहूतंमम् ॥ ४३ ॥
अग्निर्ज्ज्योतिः÷। अग्निर्ज्ज्योतिर्ज्ज्योतिर्-
ग्निः स्वाहासूर्य्योर्ज्ज्योतिर्ज्ज्योतिः सूर्य्यः
स्वाहा ॥ अग्निर्व्वर्च्चोर्ज्ज्योतिर्व्व
र्च्चः स्वाहासूर्य्योव्वर्च्चोर्ज्ज्योतिर्व्वर्च्चः
स्वाहा ॥ ज्योतिः सूर्य्यः सूर्य्योर्ज्ज्योतिः

[४३] धूपमन्त्रः।

स्वाहा॥४४॥ अन्नंपतेन्नस्य। अन्नंपतेन्न-
स्यनोदेह्यनमीवस्यशुष्मिणं÷ । प्रप्र-
दातारन्तारिषऽऊर्ज्जन्नोधेहिद्विपदेचतु-
ष्पदे ॥ ४५ ॥ अदृशुनाते । अदृशुनाते
अदृशुÉपृच्यतामपरुषापरुं÷ ॥ गन्धस्तेसो-
मंमवतुमदायुरसोऽअच्च्युतÉ ॥ ४६ ॥
याÉफलिनीÉ । याÉफलिनीर्य्याऽअफलाऽ-

[४४] दीपकमन्त्रः । [४५] नैवेद्यमन्त्रः । [४६] करोद्वर्तनार्थे चन्दनानुलेपनमन्त्रः ।

म० सं० १२२।

अंपुष्पायाश्चंडपुष्पिणीं॰ ॥ बृहस्पतिं-
प्रसूतास्तानोंमुञ्चन्त्वꣳहंस॰ ॥ ४७ ॥
हिरण्यगर्भ॰समं। हिरण्यगर्भ॰समंवर्त्त-
ताग्रेंभूतस्यंजात॰ पतिरेकंऽआसीत ॥
सदांधारपृथिवीन्द्यामुतेमाङ्कस्मैंदेवायंहु-
विषांविधेम ॥ ४८ ॥ इदꣳहवि॰ ।
इदꣳहवि॰ प्रजनंनम्मेऽअस्तुदशंवीरꣳ

प्र० भा० १३२।

[४७] ताम्बूलमन्त्रः। [४८] दक्षिणामन्त्रः।

सर्व्वंगणꣳस्वस्तय ॥ आत्कमुसानिंप्रजा-
सनिंपशुसनिंलोकसन्न्यंभयुसानिं ॥ अग्निꣳ
प्रजाम्बहुलाम्मेंकरोत्त्वन्नन्नम्पयोरेतोंऽ-
अस्मासुधत्त ॥ ४९ ॥ आरांत्रि ।
आरांत्रिपार्त्थिवꣳरजंः पितुरंप्रायिधा-
मंभिः ॥ दिवꣳ सदांꣳसिबृहतीव्वितिष्ठसऽ-
आत्त्वेषंव्वर्त्ततेतमंः ॥ ५० ॥ येतीर्त्थानिं ।

पं० प्रेम दत्त शास्त्री
जहांगीराबाद २०२३९४
बुलन्दशहर (उ०प्र०)

येतीर्त्थानिंप्रचरंन्तिसृकाहंस्तानिषुङ्गि-
णंः । तेषांऽसहस्रयोजुनेवुधन्वांनि-
तन्मासि ॥ ५१ ॥ ॐ ३ यज्ञेन यज्ञ-
मयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्रथमा-
न्यासन् ॥ ते ह नाकम्महिमानः सचन्त
यत्र पूर्वे साद्धयाः सन्ति देवाः ॥ ५२ ॥
ॐ ३ राज्ञाधिराजाय प्रसह्यसाहिने, नमो

[५१]प्रदक्षिणामन्त्रः । [५२-५५]बृहत्पुष्पाञ्जलिमन्त्राः माध्यन्दिनीयवेदधर्मेण न पठ्यन्ते इति स्वराभावः कृतः । 'यज्ञन यज्ञम्' इत्येकस्य प्रयोगे तु स्वराः, ते ७१ मन्त्रे द्रष्टव्याः

वयं वैश्रवणाय कुर्महे। स मे कामान्कामका-
माय मह्यं, कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु। कुबे-
रायवैश्रवणाय, महाराजाय नमः॥ ५३ ॥
ॐ ३ स्वस्ति, साम्राज्यं भौज्यं, स्वा-
राज्यं वैराज्यं, पारमेष्ठ्यं राज्यं, महा-
राज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात्,
सार्वभौमः सार्वायुष आन्तादापरार्धात्;
पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति, तद-

प्येष श्लोकोऽभिगीतो, मरुतः परिवेष्टारो, मरुत्तस्यावसन्गृहे। आवीक्षितस्य काम-प्रेर्विश्वेदेवाः सभासद इति ॥ ५४ ॥

ॐ ३ विश्वतश्चक्षुरुत विश्श्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात् ॥ सम्बा-हुभ्यान्धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जन-यन्देवऽ एकः ॥ ५५ ॥

सहस्रशीर्षापुरुषः । सहस्रशीर्षापुरुषꣳ सहस्राक्षꣳ सहस्रपात् ॥ सभूमिꣳसर्व्व-तस्पृत्त्वात्त्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥ ५६ ॥ पुरु-ष एव । पुरुष एवेदꣳसर्व्वꣳयद्भूतꣳयच्च भाव्यम् ॥ उतामृतत्त्वस्येशानोयदन्ने-नातिरोहति ॥ ५७ ॥ एतावानस्य ।

[५६–७१] पौरुषानुवाक (पुरुषसूक्त) मन्त्राः १६, एतेषां विष्णुपूजने देवपूजने विष्णुयज्ञस्वाहाकारे ब्रह्मार्पणे (भोजने) अपि प्रयोगः ।

एतावानस्यमहिमातोज्ज्यायाँश्चपूरु-
षः ॥ पादोस्यविश्वाभूतानित्रिपा-
दस्यामृतन्दिवि ॥ ५८ ॥ त्रिपाद्ऊ-
र्द्ध्व । त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरुषःपादोस्येहा-
भवत्पुनः ॥ ततोविष्वङ्व्यक्रामत्साशनानशनेऽअभि ॥ ५९ ॥ ततोविराट् ।
ततोविराडजायतविराजोऽअधिपूरुषः ॥
सजातोऽअत्यरिच्यतपश्चाद्भूमिमथो-

यन् ॥ ६८ ॥ यत्पुरुषेण । यत्पुरुषेणहविषा
देवायज्ञमतन्वत ॥ वसन्तोस्यासीदा
ज्यंग्रीष्मऽइद्ध्मःशरद्धविः॥६९॥सप्ता
स्यं । सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिःसप्तसमि
धः कृताः ॥ देवायद्यज्ञन्तन्वानाऽअ
बध्नन्पुरुषम्पशुम् ॥७० ॥ यज्ञेनयज्ञ
म् । यज्ञेनयज्ञमयजन्तदेवास्तानिध
र्म्माणिप्रथमान्यासन् ॥ तेहनाकम्महिमा

हूरांजन्यू÷कृतः ॥ उरूतदस्यय॒द्वै-
श्यं÷पद्भ्यां॑शूद्रोऽअंजायत ॥ ६६ ॥
चन्द्रमामनंसः । चन्द्रमामनंसोजातश्च-
क्षोः॒सूर्य्योऽअजायत॥ श्रोत्रांद्वायुश्च-
प्राणश्चमुखांदग्निरंजायत ॥ ६७ ॥ ना-
ब्भ्यांऽआसीत् । नाब्भ्यांऽआसीदन्तारिक्षं॒
शीर्ष्णोद्यौः॒समंवर्त्तत ॥ पद्भ्यांम्भू-
मिर्द्दिशः॒श्रोत्रात्तथांलोकाँ२॥ऽ अंकल्प-

ज्ञिरतस्म्मात्तस्म्मांज्जातोऽअंजावयं ÷
॥ ६३ ॥ तंयज्ञम् । तंय्यज्ञम्बर्हिषि-
प्प्रौक्षन्न्पुरुषञ्जातमंग्ग्रतः ॥ तेनंदेवा-
ऽअंयजन्तसाद्ध्याऽऋषंयश्चये ॥ ६४ ॥
यत्पुरुषम् । यत्पुरुषंव्व्यदंधुः कति-
धाव्व्यंकल्पयन् ॥ मुखङ्किमंस्यासीत्किम्-
स्व्बाहूकिमूरूपादाऽउच्चयेते ॥ ६५ ॥
ब्ब्राह्मणोस्य । ब्राह्मणोस्यमुखंमासीद्द्बा-

पुरः ॥ ६० ॥ तस्मा॑द्य॒ज्ञात् । तस्मा॑द्य॒-
ज्ञात्सर्व्व॑हुत॒ऽसम्भृ॑तम्पृषदा॒ज्यम् ॥ प॒शूँ-
स्ताँश्चक्रे॑वायु॒व्या॑नार॒ण्याग्ग्रा॒म्याश्च॒ये
॥ ६१ ॥ तस्मा॑द्य॒ज्ञात् । तस्मा॑द्य॒ज्ञा-
त्सर्व्व॑हुत॒ऽऋचः॒सामा॑नि॒जज्ञि॑रे ॥ छन्दा॑-
ꣳसि॒जज्ञि॑रे॒तस्म्मा॒द्यजु॒स्तस्म्मा॑द॒जाय॒त
॥ ६२ ॥ तस्म्मा॒दश्वा॑ऽ । तस्म्मा॒दश्वा॑ऽ-
अजायन्त॒येकेचो॑भ॒याद॑तः ॥ गावो॑ह॒ज-